UGC NET - HOME SCIENCE

SAMPLE THEORY

PAPER - III

- गृह विज्ञान में व्यवसायिकरण
- औपचारिक शिक्षा

VPM CLASSES
For IIT-JAM, JNU, GATE, NET, NIMCET and Other Entrance Exams
1-C-8, Sheela Chowdhary Road, Talwandi, Kota (Raj.) Tel No. 0744-2429714
Web Site www.vpmclasses.com E-mail-vpmclasses@yahoo.com

गृह विज्ञान में व्यवसायिकरण

परिचय –

किसी भी राष्ट्र के विकास का अनुमान वहाँ के जन समुदाय की सर्वांगीण प्रगति, सामाजिक, आर्थिक स्तर, स्वास्थ्य इत्यादि को देखकर लगाया जा सकता है, जिस प्रकार रूस के तकनीकी विकास के पीछे वहाँ की तकनीकी संस्थानों एवं जापान के औधोगिक विकास के पीछे वहाँ की तकनीकी उधोगों का योगदान है, उसी प्रकार भारत के विकास में कहीं – कही से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से उनकी शिक्षण – संस्थाओं का भी महत्वपूर्ण योगदान, यदि भारत के जन जीवन का पारिवारिक स्तर सुधरा है, ऊँचा उठा है, तो इसका क्षेत्र कुछ सीमा तक गृह विज्ञान शिक्षण को भी जाता है जो अततः राष्ट्रीय विकास को इंगित करता हैं।

गृह विज्ञान एवं राष्ट्रीय विकास –

किसी भी राष्ट्र के विकास का अनुमान वहाँ के जनसमुदाय की सर्वागींण प्रगति, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक स्तर, स्वास्थ्य इत्यादि को देखकर लगाया जा सकता हैं। जिस प्रकार जापान के औधोगिक विकास के पीछे वहाँ के उधोगों का एवं रूस के तकनीकी विकास के पीछे वहाँ की तकनीकी संस्थाओं का योगदान है उसी प्रकार यह कहा जा सकता है कि भारत के विकास में कही –कहीं से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से उसकी शिक्षण संस्थाओं का भी महत्वपूर्ण योगदान है। यदि भारत के जन – जीवन का पारिवारिक स्तर सुधरा है, ऊँचा उठा है तो इसका क्षेत्र कुछ सीमा तक गृहविज्ञान शिक्षण को भी जाता हैं।

विकास के विभिन्न क्षेत्रो में गृह–विज्ञान का योगदान –

पारिवारिक स्तर के उत्थान में : देश के अधिकांश घर पहले की तुलना में अधिक व्यवस्थित एवं सुख – सुविधापूर्ण हो गए हैं। यद्यपि सभी घरों पर गृहविज्ञान शिक्षा का प्रभाव नही पड़ा है किन्तु गृहविज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने वाली एवं गृह विज्ञान से संबंधित कार्य क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं के घर अवश्य ही स्पष्ट रूप से इस शिक्षा से प्रभावित हुए हैं। यहाँ आधुनिकतम घरेलू उपकरणों का प्रयोग, उचित गृह – प्रबंध, घरेलू कार्यो का संतुलित बंटवारा करके अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने की चेष्टा हुई हैं।

गृहविज्ञान की शिक्षा प्राप्त लड़कियाँ जिन घरों में रहती अथवा शादी के बाद जिन घरो में जाती है, जिन परिवारों, परिचितों से मिलती है, उन्हें अपनी शिक्षा से लाभान्वित करती हैं।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में : गृहविज्ञान की शिक्षा प्राप्त लड़कियाँ स्वयं के एवं परिवार के स्वास्थ्य के प्रति अधिक सचेत रहती है। शिशु – पालन की शिक्षा प्राप्त करने कारण स्वच्छतापूर्ण वातावरण मे बच्चों का पालन – पोषण, उन्हें समय पर टीके लगवाना आदि कार्य कुशलतापूर्वक करती है। अस्वस्थ होने पर डॉक्टर की सहायता से उचित उपचार एवं स्वयं अच्छी देखभाल – परिचर्या कर वे उन्हें रोगमुक्त एवं हष्ट – पुष्ट रखने में सहायक होती है। यही कारण है कि हाल के वर्षो में शिशु मृत्युदर में उल्लेखनीय कमी आई हैं।

पोषण के क्षेत्र में : गृहविज्ञान के अन्तर्गत पोषण ज्ञान प्राप्त कर लड़कियाँ परिवार का पोषण – स्तर सुधारने में सहायक होती है। वे कम खर्च में, प्रत्येक आयु – वर्ग के सदस्यों हेतु आहार आयोजन कर सकती है। पोषक तत्वों को नष्ट होन से बचाकर, नवीनतम उन्नत पाक– विधियों का प्रयोग कर स्वादिष्ट एवं क्षुधावर्धक, तृप्तिदायक भोजन तैयार करती है। भोज्य पदार्थो का उचित संग्रहीकरण एवं अचार, जैम, जैली बनाकर संरक्षण भी करती हैं।

अपने पोषण संबंधी ज्ञान द्वारा वे अपने परिवेश एवं देश के पोषण स्तर को विकसित करती हैं।

रोजगार के क्षेत्र में – गृहविज्ञान स्नातक लड़कियाँ गृहविज्ञान शिक्षा – क्षेत्र के भीतर अथवा क्षेत्र के बाहर भी विभिन्न रोजगार प्राप्त कर सकती हैं।

गृहविज्ञान शिक्षण क्षेत्र के भीतर के रोजगार से तात्पर्य है कि जिन स्कूलों, कॉलेजों अथवा प्रशिक्षण महाविद्यालयों मे गृहविज्ञान की पढ़ाई होती हो अथवा वे सरकारी या गैर – सरकारी संस्थाएँ, जो गृहविज्ञान शिक्षण से जुड़ी है, वहाँ ये स्नातक लड़कियाँ शिक्षिका अथवा संचालिका के रूप में कार्य कर सकती हैं।

गृहविज्ञान क्षेत्र के बाहर से अर्थ हैं, कृषि –अनुसंधान, पशुपालन, डेयरी, प्रसार शिक्षा निदेशालय, औधोगिक क्षेत्र व अन्य शिक्षण संस्थाओं में भी रोजगार प्राप्त कर सकती हैं।

गृहविज्ञान शिक्षण – क्षेत्र के भीतर के रोजगार निम्नलिखित हैं –

शिक्षिका – स्कूल में गृहविज्ञान की अथवा उसके अन्तर्गत किसी एक विषय की शिक्षिका हो सकती है। कॉलेज में स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त लड़कियाँ व्याख्याता, रीडर या प्रोफेसर तक बन जाती हैं।

अनुसंधान सहायिका – गृहविज्ञान कॉलेज के किसी प्रोजेक्ट में अथवा इस क्षेत्र के गृहविज्ञान से संबंधित रिसर्च प्रोजेक्ट में अनुसंधान सहायिका के रूप में कार्य कर सकती हैं।

डायटिशियन – गृह विज्ञान कॉलेज स्थित विशाल कैफेटेरिया, कैंटीन अथवा होस्टल के मेस में गृहविज्ञान स्नातक लड़कियाँ डायटिशियन या आहार आयोजिका के पद पर कार्य कर सकती हैं।

नर्सरी स्कूल संचालिका – बड़े गृहविज्ञान महाविद्यालय जहाँ तक स्नातकोत्तर स्तर पर बाल – विकास की पढ़ाई होती है, प्रयोगशाला के रूप में नर्सरी स्कूल भी चलाते है। इन्हीं नर्सरी स्कूल की संचालिका के पद पर गृहविज्ञान स्नातक लड़कियाँ कार्य कर सकती हैं।

गृहविज्ञान शिक्षण क्षेत्र के बाहर के रोजगार –

गृहविज्ञान प्रसार कार्यकर्मी – प्रसार के क्षेत्र में गृहविज्ञान प्रसार हेतु ग्रामसेविका या मुख्य सेविका प्रशिक्षण केन्द्रो पर गृहवैज्ञानिक के पद पर रहकर उन्हें आवश्यक मार्गदर्शन प्रदान कर सकती है। भारत सरकार द्वारा प्रसार क्षेत्र. में वरिष्ठ गृहवैज्ञानिक, क्षेत्रीय गृहवैज्ञानिक, सहायक निदेशिका या गृहविज्ञान निदेशिका आदि पदों को प्राप्त कर सकती है।

प्रशिक्षण महाविद्यालय मे शिक्षिका– प्रशिक्षण महाविद्यालयों में गृहविज्ञान की शिक्षिकाओं को तैयार करने हेतु गृहविज्ञान व्याख्याता पद पर कार्य कर सकती है। इसके लिए गृहविज्ञान में स्नातकोत्तर डिग्री आवश्यक हैं।

परिधान डिजाइनर – वस्त्र एवं परिधान निर्माण में विशिष्टता प्राप्त छात्राएँ रेडीमेट वस्त्र निर्माण केन्द्रों पर ड्रेस डिजाइनर के रूप में कार्य कर सकती है, जहाँ बच्चों, स्त्रियों एवं पुरूषों के लिए फैशन के अनुरूप नवीनतम परिधानों के चयन में सहायता प्रदान कर सकती है। वे स्वयं अपना बुटीक या सिलाई स्कूल भी खेल सकती है।

डायटिशियन – अस्पतालों एवं होटलों में आहार एवं पोषण विशेषज्ञों की नियुक्ति डायटिशियन के पद पर की जाती है जहाँ वे रोगियों अथवा होटल के ग्राहकों हेतु आहार आयोजन करके मेनू (आहार तालिका) बनाते हैं।

आन्तरिक सज्जाकार – गृह – प्रबंध में विशिष्टता प्राप्त लड़कियाँ घरों, होटलों, क्लबों, विश्रामगृहों हेतु आन्तरिक सज्जाकार का काम कर सकती है। बड़े शहरों में इनकी मांग अधिक हैं।

VPM CLASSES

पत्रकार या लेखिका – देश में गृहविज्ञान से संबंधित कई महिलापयोगी पत्रिकाएँ तथा अखबारों में विशिष्ट स्तम्भ तथा पृष्ठ प्रकाशित होते है। गृहविज्ञान में विशिष्टता प्राप्त लेखन में प्रवीण लड़कियाँ ऐसी पत्र – पत्रिकाओं का सम्पादन कर सकती है या उनमें लेख लिख सकती हैं।

टी.वी. या रेडियों कलाकार – टी.वी. तथा रेडियों में भी महिलापयोगी कार्यक्रम होते रहते है जिनके माध्यम से महिलाओं को घर की देखभाल, बच्चों की देखभाल, आहार एवं पोषण, पाक कला, गृहसज्जा, स्वास्थ्य, बागवानी इत्यादि विविध विषयों की जानकारी प्रदान की जाती है। स्नातिकाएँ ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन, संचालन कर सकती है अथवा इसमें एक कलाकार के रूप में भाग ले सकती हैं।

अन्य व्यवसायों में – गृहविज्ञान की शिक्षा प्राप्त लड़कियाँ बेकरी या होटल में सुपरवाइजर या हाउसकीपर पद पर कार्य कर सकती हैं। अपना स्वयं का बुटीक खोल सकती हैं।

परिवार – कल्याण एवं जनसंख्या नियंत्रण के केन्द्र में – गृहविज्ञान – शिक्षा परिवार कल्याण के अन्तर्गत छोटा परिवार, सुखी परिवार' का संदेश भी देती है। इसके अन्तर्गत जनसंख्या शिक्षा भी दी जाती है। गृहवैज्ञानिक लड़कियाँ अपने परिवार सीमित रखकर, अन्य लोगो के समक्ष आदर्श उदाहरण प्रस्तुत कर रही हैं।

बाल – शिक्षा के क्षेत्र में – आज के बच्चे की भावी राष्ट्र के कर्णधार है। इस बात से गृहविज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने वाली लड़कियाँ भली – भाँति परिचित है। वे अपने परिवार के बच्चों की शिक्षा की ओर काफी ध्यान देने लगी है क्योंकि अब वे स्वयं भी शिक्षित है। अब वे बच्चों को घर पर भी कुछ देर पढ़ाकर सहायता कर सकती है। इस प्रकार बच्चों के पठन – पाठन में सहयोग देकर परोक्ष रूप से राष्ट्रीय विकास में योगदान दे रही हैं।

स्त्री – शिक्षा के क्षेत्र में – हमारे देश में अब भी स्त्री – शिक्षा काफी पिछड़ी है। पुरूषों की तुलना में स्त्रियों के बीच साक्षरता बहुत कम है, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रो में। पराधीन भारत में स्त्री – शिक्षा उपेक्षित रही है। अब स्वातन्त्र्योत्तर काल में इस दिशा में अनेक कार्य हो रहे है। स्त्रियों के पिछडेपन का प्रभाव परिवारों पर भी पड़ता है। गृहविज्ञान शिक्षा का उद्देश्य स्त्रियों को शिक्षित कर रोजगार के नये अवसर प्रदान कर उन्हें आत्म निर्भर बनाना हैं।

गृहविज्ञान शिक्षण अकेले, स्त्री – शिक्षा जैसा महत् कार्य नहीं कर सकता, इसीलिए सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों के साथ मिलकर यह प्रयास कर रहा है। राष्ट्रीय विकास में अपना सहयोग दे रहा हैं।

स्त्रियों ही गृहविज्ञान का प्रतिनिधित्व करती है। अतः उनके स्तर को ऊँचा उठाने का अर्थ गृहविज्ञान का विकास, अन्ततः राष्ट्रीय विकास हैं।

गृह विज्ञान शिक्षण – क्षेत्र के रोजगार –

गृह विज्ञान शिक्षण – क्षेत्र के अन्तर्गत निम्नलिखित रोजगार हैं –

- शिक्षिका, व्याख्याता, रीडर तथा प्रोफेसर के रूप में।
- अनुसंधान सहायिका के रूप में अनुसंधान संस्थानों में।
- डायटिशियन के रूप में भी कैंटीन अथवा होस्टल के मेस में।
- नर्सरी स्कूल सचालिका के रूप में

गृहविज्ञान शिक्षण क्षेत्र के बाहर के रोजगार निम्नलिखित हैं –

- गृह विज्ञान प्रसार कार्यकर्मी – ग्राम सेविका के रूप में,
- प्रशिक्षण महाविद्यालय में शिक्षिका के रूप में,
- परिधान डिजाइनर के रूप में अपना बुटीक या सिलाई स्कूल खोलकर,
- आन्तरिक सज्जाकार, पत्रकार या लेखिका, टी.वी. या रेडियों कलाकार के रूप में।
- परिवार कल्याण एवं जनसंख्या नियंत्रण के क्षेत्र में।
- कल्याण एवं जनसंख्या नियंत्रण के क्षेत्र में।
- बाल – शिक्षा के क्षेत्र में तथा स्त्री– शिक्षा के क्षेत्र में, स्नातक सम्मान, स्नातकोत्तर एवं शोध करती हुई छात्राएँ निम्नलिखित विषय – क्षेत्र का अध्ययन करती हैं –
- आहार एवं पोषण विज्ञान,
- पारिवारिक संसाधनों का व्यवस्थापन,
- वस्त्र विज्ञान एवं परिधान,
- मानव विकास एवं
- गृह विज्ञान प्रसार शिक्षा।

आहार एवं पोषण विज्ञान का ज्ञान प्राप्त कर छात्राएँ अपने परिवार में सदस्यों हेतु उत्तम, पौष्टिक आहार का आयोजन कर सकती है, उन्नत पाक – विधियों से भोजन पकाकर आकर्षक ढंग से परोसती है, साथ ही भोज्य पदार्थो को जैम, जैली, अचार, मुरब्बे, पापड़ बड़ी आदि के रूप में संरक्षित करना भी सीखती है, विशेष अवसरो हेतु औपचारिक तथा अनौपचारिक पार्टियों का आयोजन करना, विभिन्न शैलियों से भोजन – मेज की सज्जा, भोजन संबंधी शिष्टाचार आदि का भी ज्ञान प्राप्त करती हैं।

गृह कला एवं गृह प्रबंध की शिक्षा लेकर अपने घर की भावी गृहिणी के रूप में व्यवस्था सुचारू रूप से करके परिवार को सुख शान्ति प्रदान कर सकती, सीमित आय में बजट बनाना, समय, शक्ति, धन के अनुरूप गृह प्रबंध करना, उपलब्ध साधनों द्वारा इच्छित लक्ष्य की प्राप्ति करना सीखती है, अपने परिवार के सदस्यों के लिए वस्त्रों का चयन, खरीददारी करती है, आधुनिक फैशन के अनुरूप वस्त्र स्वयं सीतीं है तथा सिलवाती है, वस्त्रों के प्राकृतिक एवं कृत्रिम रेशे, वस्त्र निर्माण प्रक्रिया, बुनावट, परिसज्जाएँ एवं रेशे की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त करती है, और वस्त्रों की धुलाई, दाग – धब्बे छुड़ाना, वस्त्रों की देखरेख, संरक्षण एवं संचयन करने की विधियों की शिक्षा भी ग्रहण करती हैं, परम्परागत वस्त्रों का इतिहास, वस्त्रों का सामाजिक, मनोवैज्ञानिक महत्व, परिधानों का अवसरोचित चयन एवं परिधान संबंधी शिष्टाचार का ज्ञान अर्जित करती है, मानव विकास में भी भरपूर शिक्षा ग्रहण कर बाल विकास करने में सहायक होती है, शिशु जन्म प्रक्रिया, प्रसवपूर्व एवं प्रसवोपरांत स्त्री की देखभाल, शिशु का आहार, वस्त्र, पालन – पोषण शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक विकास का अध्ययन करती हैं।

मृदुला सेठ द्वारा गृह विज्ञान प्रसार शिक्षा के तीन आवश्यक अंग निम्नलिखित हैं –

• प्रसार शिक्षा • प्रसार सेवा तथा • प्रसार कार्य, प्रसार शिक्षा, शोध एवं प्रसार कार्य से संबंधित है जो प्रायः बड़े शिक्षा संस्थानों तथा विश्वविद्यालयों में होते हैं।

प्रसार सेवा शोध संस्थानों तथा गृहणियों के बीच की दूरी कम करने का कार्य करती हैं।

गृह विज्ञान प्रसार – शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

- गृहिणियों के सर्वोन्मुखी विकास में सहायता देना।
- उपलब्ध संसाधनों के उपयोग में गृहिणियां की सहायता करना, तथा
- सरकारी कार्यक्रमों, गृहणियों के सार्वभौमिक विकास को बढ़ावा देने वाली स्वैच्छिक संस्थानों के कार्यो को सुदृढ़ करना।

गृह विज्ञान प्रसार शिक्षा के कार्यक्रम निम्नलिखित हैं –

,• माँ एवं शिशु की देखभाल, • स्वास्थ्य एवं स्वच्छता, • आर्थिक विकास कार्यक्रम, • बच्चों एवं महिलाओं हेतु सामुदायिक सगठनों का निर्माण, • शिक्षा एवं वयस्क शिक्षा, • गृह व्यवस्था, जिसमें पारिवारिक बजट बनाना एवं घर की सजावट करना, • महिलाओं एवं बच्चों के लिए मनोरंजक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करना तथा, • रसोई वाटिका, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन को प्रोत्साहन देना।

प्रसारकर्ता के कार्य

ग्रामीण विकास के सभी प्रसार कार्यक्रम प्रसार कार्यकर्त्ता के प्रयासों एवं दूरदर्शिता पर निर्भर करते हैं। वह नेता, शिक्षक तथा प्रशिक्षण होता है तथा कार्यक्रम क्रियान्वयन मे मध्यस्थ की भूमिका निभाता है। प्रसार कार्यक्रमों की सफलता भी प्रसार कार्यकर्ता के प्रयत्नों तथा परिश्रमों पर निर्भर करता है। जिन क्षेत्रों में प्रसार कार्यकर्ता निष्क्रिय होते है, उन क्षेत्रो में कोई भी विकास – योजना सफलता के चरण तक नही पहुँच पाती और वे क्षेत्र पिछड़ेपन के दायरे से निकल नहीं पातें। अतः प्रसार कार्यकर्ता का कार्य – क्षेत्र अत्यन्त दायित्वपूर्ण होता है।

- कृषकों के साथ विचार – विमर्श करके उनके हितार्थ तदनुरूप प्रसार कार्यक्रम नियोजित करना तथा कार्यक्रम की रूपरेखा को प्रसार पर्यवेक्षक के सम्मुख प्रस्तुत करना एवं क्रियान्वित करवाना।
- कृषकों के साथ विचार – विमर्श करके उनके हितार्थ तदनुरूप प्रसार कार्यक्रम नियोजित करना तथा कार्यक्रम की रूपरेखा को प्रसार पर्यवेक्षक के सम्मुख प्रस्तुत करना एवं क्रियान्वित करवाना।
- नवाचार प्रसारण हेतु विविध प्रसार प्रणालियों; यथा – वार्तालाप, प्रदर्शन, गोष्ठी, सभा, भ्रमण आदि का आयोजन कर शैक्षणिक गतिविधियों का आयोजन एवं संचालन करना।
- ग्रामीणों के कार्य – क्षेत्र एवं उनके घर जाकर उनसें व्यक्तिगत सम्पर्क बनाए रखना तथा पारस्परिक संबंध को अत्यन्त सौहार्दपूर्ण बनाए रखना जिससे लोगों का विश्वास प्राप्त हो सके।
- लोगों से घनिष्ठता बनाए रखने के लिए उसके सभी धार्मिक एवं सामाजिक कार्य – कलापों में सक्रिय रूप से भाग लेना।

- प्रशासन, बैंक, जीवन बीमा निगम तथा अन्यान्य विविध ऐजेन्सियों द्वारा प्रदत्त लाभकारी योजनाओं तथा सेवाओं की जानकारी ग्रामीणों को देना तथा उनसे लोगो को लाभान्वित करवाना।
- ग्रामीण युवाओं को सभी प्रसार कार्यक्रमों में भागीदार बनाते हुए उनकी शक्ति का अधिकतम उपयोग करना।
- सांस्कृतिक कार्यक्रमों को आयोजित करवाते रहना जिससे लोगों का आपस में मिलना – जुलना होता रहे और साथ ही साथ उनका मनोरंजन भी होता रहे हैं।
- सभी कार्यक्रमों, गतिविधियों तथा कार्यकलापों का लेखा –जोखा रखना, विवरण तैयार करना तथा संबंधित समाचार प्रसारित करना।
- प्रसार कार्यक्रमों की गतिविधियों से प्रशासनिक को अवगत करवाते रहना; नयी योजनाओं को लागू करने से संबंधित सुझाव देना तथा उन्हें क्रियान्वित करने में प्रशासन की सहायता करना।
- प्रसार कार्यकर्ता प्रशासन तथा लोगों के बीच एक कड़ी की तरह होता है। उसे दोनों ही पक्षों की समस्याओं को समझना चाहिए और दोनो पक्षों के बीच तालमेल बनाए रखना चाहिए।

प्रसार कार्यकर्ता के गुण

प्रसार कार्य बहुआयामी होता है। इसके विभिन्न पहलू होते है। प्रसार कार्य के अन्तर्गत अनेक क्षेत्र, जैसे – कृषि, लघु उधोग, कुटीर उधोग, गृह प्रबंध, आहार आयोजन, शिशु पालन, साक्षरता, सामुदायिक विकास इत्यादि आते हैं। प्रसार कार्यकर्ता का संबंध सभी क्षेत्रों तथा गाँव के सभी वर्ग के लोगों से होता है। उसे सभी के साथ मिल – जुल कर, अत्यन्त विनम्रता, संयम, विवेक तथा प्रेम भाव के साथ निर्वाह करना होता है। ऐसी स्थिति में, हर प्रकार कार्यकर्ता में कुल मूलभूत गुणों का होना आवश्यक माना जाता है। इन गुणों की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती हैं –

ग्रामीण परिवेश से जुड़ाव – प्रसार कार्यकर्ता को ग्रामीण परिवेश से जुड़ा होना एक महत्वपूर्ण शर्त है। इस गुण के अभाव में किसी भी व्यक्ति का प्रसार कार्य को समझना भी कठिन होता है। ग्रामीण परिवेश से जुड़े लोग ही गाँव की समस्याओं को अच्छी तरह समझ सकते है और वहाँ के लोगों के साथ मिल – जुल कर काम कर सकते हैं।

विषय – ज्ञान – प्रसार कार्य का क्षेत्र, अत्यन्त व्यापक एवं विस्तृत होता है। ग्रामीण समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, भूगोल, अरोग्यशास्त्र, गृहविज्ञान, कृषि विज्ञान, पशुपालन, मत्स्य पालन, यांत्रिकी तथा अन्य कई विषय इसके अन्तर्गत आते हैं। कार्य में इन सभी, विषयों से संबंधित कार्यो की योजना बनायी एवं क्रियान्वित की जाती है। प्रसार कार्यकर्ता से अपेक्षा की जाती है कि वह प्रसार के सभी क्षेत्रों के विषय में कुछ मूलभूत जानकारियाँ रखता हो तथा संबंधित विषयों से अनभिज्ञ न हो। उसमें यह भी गुण होना चाहिए कि वह नई सूचनाएँ तथा जानकारियों को प्राप्त करने के लिए सचेष्ट रहे और अपने ज्ञान को बढ़ाने के निमित्त तत्पर रहे।

प्रगतिशील विचारधारा – जडत्व एवं रूढिवादिता व्यक्ति के मार्ग में बाधक होते है। अपने ही दायरे और पुरातन विचारों से घिरे लोग एक सीमिति दायरे में बन्द रहते है। आगे बढ़ने के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति प्रगति एवं उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो। ऐसा प्रगतिशील विचारधारा वाले लोग ही कर सकते हैं।

प्रगतिशील विचारधारा – जड़त्व एवं रूढिवादिता व्यक्ति के मार्ग मे बाधक होते है। अपने दायरे और पुरातन विचारों से घिरे लोग एक सीमित दायरे में बन्द रहते है। आगे बढ़ने के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति प्रगति एवं उन्नत के मार्ग पर अग्रसर हो। ऐसा प्रगतिशील विचारधारा वाले लोग ही कर सकते हैं।

चरित्रवान – ग्रामीणों के समक्ष प्रसारकर्ता को एक आदर्श प्रस्तुत करना होता है। एक अच्छा चरित्रवान व्यक्ति की दूसरों के सामने आदर्श के रूप में स्तम्भ समान खड़ा रह सकता हैं।

आदर्श व्यक्तित्व – प्रसार कार्यकर्ता को सर्वप्रिय बनकर, सबका मन मोह लेना होता है। ग्रामीणों के बीच उसका स्थान एक मित्र, प्रदर्शक और शिक्षक का होता है। एक आदर्श व्यक्तित्व सम्पन्न व्यक्ति ही सबका मित्र और मार्गदर्शक बन सकता है। प्रसार शिक्षण के अन्तर्गत प्रसार कार्यकर्ता के व्यक्तित्व का गम्भीर प्रभाव लोगों पर पड़ता है।

कार्यक्रम नियोजन एवं प्रबंधन – किसी भी कार्यक्रम की सफलता उसके सुव्यवस्थित नियोजन एवं कुशल प्रबंधन पर निर्भर करती हैं। प्रसार कार्यक्रमों का नियोजन काफी हद तक प्रशासनिक या आधिकारिक स्तर पर होता हैं, किन्तु उसमें प्रसार कार्यकर्ता की भागीदारी रहती है। जहाँ तक प्रबंधन का प्रश्न है, उसमें तो शत – प्रतिशत जिम्मेदारी प्रसार कार्यकर्ता की ही होती हैं।

मार्गदर्शन एवं नेतृत्व – प्रसार कार्यक्रमों के माध्यम से लोगो तक प्रगति को ज्योति की किरण ले जाने वाला प्रसार कार्यकर्ता होता है। किस वर्ग या समुदाय के व्यक्ति के लिए कौन – सा कार्यक्रम उपर्युक्त रहेगा, इसका निर्धारण करना तथा कार्यक्रम संबंधी जानकारी लोगो को देना प्रसार कार्यकर्ता का कार्य होता है। वह लोगों को नई पद्धतियों, तकनीकों के बारे में बताने के लिए साथ –साथ सरकारी स्तर पर दी जाने वाली सुविधाओं, बैंको द्वारा प्रदत्त ऋण एवं अनुदानों के विषय में भी सूचनाएँ प्रदान करता है। बेहतर जीवन के लिए लोगों का मार्गदर्शन कर वह सफल नेतृत्व का परिचय देता हैं।

विशेषज्ञों की सेवाएँ उपलब्ध करवाना – प्रसार कार्य के विस्तृत क्षेत्र को देखते हुए प्रसार कार्यकर्ता से सभी क्षेत्र. में दक्षता की अपेक्षा नही की जा सकती। ऐसे अनेक क्षेत्र होते है, जिनमें विशेषज्ञों के परामर्श की आवश्यकता पड़ती हैं कृषि तथा लघु उधोगो में तकनीकी परामर्श, खाद्य – संरक्षण एवं पौष्टिक आहार संबंधी जानकारियाँ, मत्स्य – शूकर – कुक्कुट पालन संबंधी निर्देश, स्वास्थ्य रक्षा, टीकाकरण इत्यादि ऐसे क्षेत्र है जहाँ विषय – विशेषज्ञ की सेवाओं की आवश्यकता पड़ती है। प्रसार कार्यकर्ता को बेझिझक इनकी सेवाएँ ग्रामीणों को उपलब्ध करवानी चाहिए। यदि वह अहं की भावना से ग्रसित रहेगा और लोगों को विशेषज्ञों द्वारा दी जाने वाली सूचनाओं से वंचित रखेगा, तो प्रसार कार्यक्रमों को आगे ले जाने मे वह कभी भी सफल नहीं हो पाएगा।

प्रसार कार्यकर्ता का प्रशिक्षण –

किसी कार्य को बेहतर ढंग से उत्पन्न करने के निमित्त प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। प्रशिक्षण के द्वारा ज्ञान, कार्य – क्षमता, मनोवृत्ति तथा समझ में बढ़ोतरी होती हैं। प्रसार कार्यकर्ता के प्रशिक्षण द्वारा दोहरा लाभ होता है। प्रशिक्षित कार्यकर्ता ग्रामीणों को उत्तम विधि प्रचारित एवं प्रसारित करते हैं। इसके फलस्वरूप ग्रामीणों की भी मनोवृत्ति, ज्ञान भण्डार, कार्य – निष्पादन शैली आदि में वांछित परिवर्तन लाने में सरलता होती है। ग्राम – विकास की गति से तीव्रता आने के साथ – साथ लोगो के जीवन – स्तर में भी सुधार आता हैं।

औपचारिक शिक्षा

परिचय

औपचारिक शिक्षा से हमारा तात्पर्य उस शिक्षा से है, जो जान–बूझकर, सप्रयत्न दी जाती है। विद्यालय औपचारिक शिक्षा प्रदान करने के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अभिकरण हैं। इस प्रकार हम कह सकते है

कि विद्यालयों द्वारा मातृभाषा, गणित, इतिहास, भूगोल, विज्ञान आदि विषयों की जो शिक्षा दी जाती है। वही औपचारिक शिक्षा है। औपचारिक शिक्षा के लिए सचेष्ट प्रयत्न किए जाते हैं, अर्थात इसे प्रदान करने के लिए नियमित रूप से अभिकरण स्थापित होते हैं, पाठ्यक्रम बनाया जाता है, उस पाठ्यक्रम को पूरा करने के लिए सुनियोजित कार्यक्रम बनाए जाते हैं तथा अन्त में छात्रों का सुनिश्चित ढंग से ही मूल्यांकन किया जाता है। कुछ व्यक्ति अपने घरों पर भी निजी ट्यूशन आदि की व्यवस्था कर बच्चों की औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था करते हैं जहाँ कोई शिक्षक बालकों को सुनिश्चित ढंग से शिक्षा प्रदान करने की सुचेष्ट क्रियाएँ करता है। इस प्रकार से औपचारिक शिक्षा वह शिक्षा है जिसको पूर्व–आयोजन, नियोजन एवं सप्रत्यशील उपायों से प्रदान किया जाता है। इसके लिए उद्देश्य, पाठ्य–विधियों आदि को भी सुनिश्चित आयोजन किया जाता है।

औपचारिक शिक्षा की विशेषताएँ –

औपचारिक शिक्षा में निम्नांकित विशेषताएँ पाई जाती हैं–

1. औपचारिक शिक्षा में सुनियोजित सचेष्ट प्रयासों तथा व्यवस्था की आवश्यकता होती है।
2. औपचारिक शिक्षा, कृत्रिम, जटिल तथा अप्राकृतिक होती है, जिसे प्राप्त तथा प्रदान करने के लिए सुनियोजित क्रियायें तथा कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।
3. यह शिक्षा मूलतः विद्यालयों द्वारा प्रदान की जाती है।
4. सामान्यतः औपचारिक शिक्षा का एक सुनिश्चित पाठ्यक्रम होता है, जिसे एक सुनिर्धारित समय में पूरा करना होता है।
5. यह अत्यन्त कष्टसाध्य है तथा परिश्रम चाहती है।
6. इस प्रकार की शिक्षा जीवन–पर्यन्त नहीं चलती है। जब तक बालक विद्यालय जाता है, यह शिक्षा तभी तक चलती है।
7. औपचारिक शिक्षा प्रमुखतः भौतिक होती है, जो हमें भौतिक साधन जुटाने की योग्यता प्रदान करती है।

अनौपचारिक शिक्षा –

लिखना, पढ़ना या अक्षर ज्ञान कर लेना ही शिक्षा नहीं है। शिक्षा इससे बहुत अधिक व्यापक तथा विस्तृत प्रत्यय है। विद्यालयों में तो हम केवल कुछ विषय का ज्ञान प्राप्त करते हैं। शिक्षा वह है जो हम अपने जीवन के अच्छे–बुरे अनुभवों से सीखते हैं। प्रत्येक व्यक्ति जीवन–पर्यन्त या आजीवन अनुभव प्राप्त करता है। इसलिए वह आजीवन शिक्षा प्राप्त करता है। अनुभव प्राप्त करने में हमारी सभी ज्ञानेन्द्रियाँ लिप्त रहती हैं। इसे हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि अपनी विभिन्न ज्ञानेन्द्रियाँ के द्वारा मनुष्य जो अनुभव प्राप्त करता है उनका कुल योग ही शिक्षा है।

अनौपचारिक शिक्षा का अर्थ –

अनौपचारिक शिक्षा में अनौपचारिक शब्द विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है जो 'शिक्षा' की विशेषता बतलाता है। अनौपचारिक शब्द दो शब्दों की संधि से बना है– अन्–उपचारिक। 'अन्' का अर्थ है 'नहीं' तथा उपचारिक शब्द 'उपचार' से बना है। 'उपचार' का अर्थ है इलाज, चिकित्सा या व्यवस्था। इस प्रकार अनौपचार का अर्थ है व्यवस्थाहीन, अर्थात जिसके लिए कोई चिकित्सा या प्रयत्न या चेष्टा न की जाय। इस प्रकार अनौपचारिक शिक्षा वह है जिसे व्यक्ति बिना किन्हीं व्यवस्थित साधनों अथवा प्रयासों के स्वतः ही प्राप्त कर लेता है।

प्रो. जे. एस रास ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "अनौपचारिक शिक्षा बालक के द्वारा सभी प्रभाव ग्रहण करना और उसे अपनी प्रकृति से उत्तेजित कर पूर्णतया विकास करना सिखाती है।" सरल शब्दों में "अनौपचारिक शिक्षा जीवन से सम्बन्धित वे अनुभव हैं, जिन्हें हम बिना किसी व्यवस्थित प्रयास, संस्था तथा साधन के स्वाभाविक स्थिति से प्राप्त करते हैं। इस प्रकार की शिक्षा प्रत्यक्ष रूप से जीवन से सम्बन्धित होती है तथा जीवन–पर्यन्त चलती है।"

अनौपचारिक शिक्षा के उद्देश्य –

औपचारिक शिक्षा का आयोजन तथा संगठन किसी न किसी उद्देश्य को लेकर किया जाता है। शैक्षिक तकनीकी से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है कि औपचारिक शिक्षा दिन पर दिन उद्देश्य केन्द्रित होती जा रही है। इसके विपरीत, अनौपचारिक शिक्षा उद्देश्यविहीन होती है, किन्तु सही अर्थो में ऐसा नहीं है। अन्तर केवल इतना है कि औपचारिक शिक्षा के उद्देश्य सचेष्ट रूप से निर्धारित किये जाते हैं इसलिए हम औपचारिक शिक्षा के उद्देश्यों का सरलता के साथ उल्लेख कर देते है। इसके विपरीत,

अनौपचारिक शिक्षा में कोई पूर्व निश्चित उद्देश्य न होने के कारण हम उसके उद्देश्य नहीं बता पाते और कह देते हैं कि वह उद्देश्यविहीन है।

वास्तव में, अनौपचारिक शिक्षा के उद्देश्य अत्यन्त व्यापक तथा सामान्यीकृत होते हैं। उनको कुछ शब्दों के द्वारा व्यक्त करना कठिन–सा हो जाता है। अनौपचारिक शिक्षा को प्रमुख उद्देश्य व्यक्तित्व के सभी पक्षों को जन्म से मृत्यु तक प्रभावित करना है। संक्षेप में, अनौपचारिक शिक्षा के निम्नांकित उद्देश्य अंकित किये जा सकते है

1. व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में समन्वय स्थापित करना।
2. जीवनोपयोगी ज्ञान तथा अनुभव प्रदान करना।
3. सफल जीवन व्यतीत करने की योग्यता का विकास करना।
4. व्यक्ति के व्यक्तित्व के सभी आयामों, पहलुओं तथा क्षेत्रों को प्रभावित कर उन्हें एक निश्चित दिशा प्रदान करना।

अनौपचारिक शिक्षा की विशेषताएँ

1. अनौपचारिक शिक्षा स्वाभाविक, जीवन से सम्बन्धित, सरल तथा प्राकृतिक रूप में होती है।
2. अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए मनुष्य को अपने चारों ओर के वातावरण, परिवार, पड़ोस, समाज आदि पर मूल रूप से निर्भर रहना पड़ता है, क्योंकि ये ही अनौपचारिक शिक्षा के मुख्य स्त्रोत हैं।
3. अनौपचारिक शिक्षा व्यक्ति की मूल–प्रवृत्तियों तथा उसकी रूचि पर निर्भर करती है।
4. अनौपचारिक शिक्षा मनुष्य की अपने अनुभवों से लाभ उठाने की योग्यता पर निर्भर करती है।
5. अनौपचारिक शिक्षा औपचारिक शिक्षा के समान कष्टसाध्य तथा श्रमसाध्य नहीं होती है। अनौपचारिक शिक्षा सुखद् तथा मनोरंजनकारी होता है।
6. अनौपचारिक शिक्षा जन्म से प्रारम्भ होकर मृत्यु–पर्यन्त चलती है। यह जीवन–पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है, क्योंकि व्यक्ति जीवन–भर अनुभव प्राप्त करता रहता है।

निरौपचारिक शिक्षा

शिक्षा के स्वरूप के दो विषम रूप– औपचारिक तथा अनौपचारिक हैं। इनमें औपचारिक स्वरूप पूर्ण नियन्त्रणवादी है जिसमें शिक्षा के हर पहलू पर नियन्त्रण होता है। इसमें कक्षा–कक्ष प्रवेश, पाठ्यक्रम, शिक्षण–विधि, अनुशासन, परीक्षा, स्थान, आयु, योग्यता, आदि सभी नियन्त्रित होते हैं। शिक्षा का दूसरा

रूप अनौपचारिक शिक्षा है जिसमें सभी कुछ पूर्ण रूप से अनियन्त्रित है। इसमें न कक्षा–कक्ष है, न कोई पाठ्यक्रम, न परीक्षा और न अनुशासन आदि। वर्तमान में इन पूर्ण नियन्त्रित तथा अनियन्त्रित स्वरूपों के बीच एक नया रूप शिक्षाविदों ने विकसित किया है जिसमें शिक्षा न पूर्णरूपेण नियन्त्रित है और न अनियन्त्रत। शिक्षा के इस नये स्वरूप को निरौपचारिक शिक्षा के नाम से पुकारा जाता है। निरौपचारिक शिक्षा न तो पूर्णरूपेण अनियन्त्रित है जैसी कि अनौपचारिक शिक्षा होती है और न पूर्णरूपेण नियन्त्रित है जैसी कि औपचारिक शिक्षा होती है। निरौपचारिक शिक्षा में नियन्त्रण के साथ अनियन्त्रण होता है। अर्थात् शिक्षार्थी जहाँ कई क्षेत्रों में पूर्ण नियन्त्रित होता है, वह साथ ही साथ कई अन्य क्षेत्रों में अनियन्त्रित रहता है। उदाहरण के लिये निरौपचारिक शिक्षा में आयु, स्थान, शिक्षण–विधि आदि के क्षेत्र में शिक्षार्थी पर कोई नियन्त्रण नहीं होता है। किन्तु पाठ्यक्रम, परीक्षा जैसे मुद्दों पर नियन्त्रण होता है। उदाहरण के लिए खुले विश्वविद्यालयों द्वारा दी जाने वाली शिक्षा निरौपचारिक शिक्षा है। क्योंकि इसमें शिक्षा का एक निश्चित पाठ्यक्रम है तथा परीक्षा की भी व्यवस्था है। यह शिक्षा का नियन्त्रित पक्ष है किन्तु छात्र की पूर्व–योग्यता, स्थान, आयु आदि के सम्बन्ध में कोई नियन्त्रण नहीं है। यह शिक्षा का अनौपचारिक पक्ष है। इसी प्रकार पत्राचार पाठ्यक्रमों को भी निरौपचारिक शिक्षा कहा जा सकता है।

शिक्षा के अभिकरण –

किसी भी समाज या समुदाय में औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा के साधन पाये जाते हैं, उन्हीं को शिक्षा के अभिकरण कहा जाता है। समाज में जो इस प्रकार के अभिरकरण होते हैं उन्हें हम निम्नांकित वर्गो में विभक्त कर सकते हैं–

1. क्रियाशीलता के आधार पर

   (i) सक्रिय अभिकरण (ii) निष्क्रिय अभिकरण

2. औपचारिकता के आधार पर

   (i) औपचारिक अभिकरण (ii) अनौपचारिक अभिकरण

1. सक्रिय अभिकरण– शिक्षा के सक्रिय अभिकरण वे हैं जो शिक्षा–व्यवस्था के माध्यम से समाज पर नियन्त्रण करके समाज को एक निश्चित दिशा प्रदान करने की चेष्टा करते हैं। सक्रिय अभिकरणों के अन्तर्गत शिक्षक तथा शिक्षार्थी एक–दूसरे निकट सम्पर्क में आकर पारस्परिक सम्पर्क स्थापित कर

एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार के अभिकरणों में हम परिवार, विद्यालय, धर्म, समाज तथा राज्य आदि को सम्मिलित करते हैं।

2. **निष्क्रिय अभिकरण**– निष्क्रिय अभिकरण वे हैं जो अपने प्रभावों से शिक्षार्थी को तो प्रभावित करते हैं किन्तु स्वयं शिक्षार्थी के प्रभावों से अप्रभावित रहते हैं। इन पर छात्रों को कोई प्रभावन नहीं पड़ता है। यहाँ अन्तःक्रिया नहीं होती है। केवल प्रसारण होता है, ग्रहण नही होता है। इस प्रकार के अभिकरणों में हम रेडियो, टेलिविजन, फिल्म, समाचार–पत्र आदि को सम्मिलित करते हैं।

3. **औपचारिक अभिकरण**– शिक्षा के औपचारिक अभिकरणों से तात्पर्य शिक्षा के उन साधनों, स्त्रोतो तथा संस्थाओं एवं संगठनों से है। जो सक्रिय रूप से और सुनियोजित तथा निश्चित योजना के अनुसार शिक्षा प्रदान करने के सचेतन प्रयास करते है। शिक्षा प्रदान करने की इनकी एक सविचार प्रक्रिया होती है, इनकी एक निश्चित शिक्षण–प्रक्रिया होती है, पूर्व नियोजित पाठ्यक्रम होता है, निश्चित कार्य प्रणाली तथा कार्य–विधि होती है। इनके कार्य का समय, शिक्षण–विधि, नियम आदि निश्चित होते हैं। शिक्षा के औपचारिक अभिकरणों में विद्यालय, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, अजायबघर आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

4. **अनोपचारिक अभिकरण**– समाज में कुछ संस्थाएँ, साधन तथा स्त्रोत ऐसे भी पाये जाते हैं जो बालक को शिक्षा प्रदान करते हैं, किन्तु शिक्षा प्रदान करने के लिए न तो वे बाध्य होते हैं न कोई निश्चित शिक्षा–नियम, विधियाँ तथा कार्य–प्रणाली होती है, और न कोई सुनियोजित योजना होती है। इनकी शिक्षा–प्रक्रिया, परोक्ष, अज्ञात, तथा अनियोजित होती है। इन अभिकरणों में परिवार, धार्मिक संस्थाएँ, समाज, खेल के मैदान पड़ोस, मित्र–मण्डली आदि को सम्मिलित करते हैं।

औपचारिक अभिकरण

1. **विद्यालय**

विद्यालय शिक्षा का औपचारिक सक्रिय अभिकरण है। भारतीय दर्शन के अनुसार विद्यालय वह स्थान (आलय) है जहाँ विद्या का आदान–प्रदान होता है। इससे स्पष्ट है कि विद्या का आदान–प्रदान करने हेतु निश्चित स्थान होना चाहिए। आदान–प्रदान करने हेतु गुरू तथा शिष्य होने चाहिए। अंग्रेजी में विद्यालय के लिए 'स्कूल' शब्द का प्रयोग किया जाता है। अंग्रेजी में यह शब्द लैटिन भाषा के 'स्कोला' शब्द से गठित हुआ है; और लैटिन का यह शब्द ग्रीक भाषा के 'स्कोल' शब्द से निर्मित हुआ है। ग्रीक

भाषा में 'स्कोल' का अर्थ 'अवकाश' से लिया जाता है ; अर्थात् वह स्थान, जहाँ नवयुवक अपने अवकाश के क्षणों में खेलकूद, व्यवसाय तथा युद्ध–विद्या का प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। धीरे–धीरे यह स्कूल शब्द पूर्ण रूप से शिक्षा प्रदान करने वाले केन्द्रों के लिए प्रयुक्त होने लगा।

विद्यालय के कार्य –

समाज के प्रतिनिधि के रूप में विद्यालय निम्न कार्य सम्पादित करता है।

1. समाज की संस्कृति का हस्तान्तरण, परिमार्जन तथा चयन करता है।
2. बालकों की व्यक्तिगत योग्यताओं का विकास करता है।
3. सामाजिक दक्षता का विकास करता है।
4. छात्रों को आत्मनिर्भर तथा सुयोग्य नागरिक बनाता है।
5. सामाजिक पुनर्रचना तथा पुनर्जागरण का कार्य करता है।
6. आध्यात्मिक विकास करता है।
7. परिवार के शिक्षा–कार्यो को पूरा करता है।
8. छात्रों को विभिन्न क्रियाओं के माध्यम से भावात्मक प्रशिक्षण देता है।
9. छात्रों को सुन्दर जीवन व्यतीत करने का प्रशिक्षण देता है।
10. चरित्र का निर्माण करता है।

अनोपचारिक अभिकरण

(1) परिवार

परिवार बालक की शिक्षा का प्रथम अनौपचारिक तथा सक्रिय साधन है। परिवार सम्पूर्ण तथा समग्र सामाजिक व्यवस्था की आधारभूत ईकाई है, जिसमें सामान्य रूप से पति–पत्नि तथा उनकी सन्तानें रहती है। परिवार में पति–पत्नि के माता–पिता तथा अति विशिष्ट अवस्थाओं में अन्य जन रहते हैं। माता–पिता परिवार की धुरी होते हैं, जिनके चारों तरफ सम्पूर्ण परिवार व्यवस्थित रहता है। परिवार की परिभाषा देते हुए क्लेयर लिखते हैं कि "परिवार से हम सम्बन्धों की उस व्यवस्था को समझते हैं जो माता–पिता तथा उनकी सन्तानों के मध्य पाई जाती है।"

परिवार का महत्त्व : न केवल बालक की शिक्षा में ही वरन् सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास में परिवार का बड़ा महत्व है। बालक परिवार में जन्म लेता है, वहीं वह अपने शैशव–जीवन में उठना, बैठना, चलना,

दौड़ना, बोलना आदि सीखता है। आचरण तथा भाषा का आधारभूत ज्ञान परिवार ही देता है। परिवार ही बालक के व्यवहारों की नीवं रखता है। परिवार से ही बालक आचरण करना सीखता है। इतिहास अनेक उदाहरण प्रस्तुत करता है जिनसे स्पष्ट होता है कि बहुत–से महापुरूष केवल अपनी माँ के कारण ही महापुरूष बन पाये।

परिवार के शिक्षा सम्बन्धी कार्य

परिवार को शिक्षा–सम्बन्धी निम्नांकित कार्य करने चाहिए–

1. बालक में समुचित आदतों तथा आचरणों का विकास करना चाहिए।
2. बालकों में कर्त्तव्यनिष्ठा, लगन, आज्ञापालन तथा अनुशासन का विकास करना चाहिए।
3. बालक की औपचारिक शिक्षा की ओर ध्यान देना चाहिए।
4. बालक को जीवनयापन की शिक्षा देनी चाहिए।
5. सामाजिक गुणों का विकास करना चाहिए।
6. बालक में रचनात्मक शक्तियों का विकास करना चहिए।
7. बालको के लिए स्वस्थ मनोरंजन के साधनों की व्यवस्था करनी चाहिए।
8. परिवार को विद्यालय के कार्यो में सहयोग देना चाहिए।

(2) **धर्म** : धर्म भी शिक्षा का सक्रिय अनौपचारिक साधन है। धर्म का न केवल शिक्षा के क्षेत्र में, वरन सम्पूर्ण मानव जीवन में बड़ा महत्त्व है। भारतीय जीवन में तो यह महत्त्व कुछ अधिक ही है। भारतीय जीवन में यह धर्म इतना घुल–मिल गया है कि इसके जीवन से धर्म निकाल दिया जाय तो जीवन बचना ही नहीं है। भारतीयों के जीवन के प्रत्येक पहलू में धर्म है। शैक्षिक, सामाजिक, राजनैतिक आदि सभी कार्यो में धर्म की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। भारत में अनेक शिक्षालय धार्मिक संस्थाओं द्वारा संचालित होते हैं। मुस्लिम काल में भी अनेक मदरसे तथा मकतब किसी न किसी मस्जिद से सम्बन्धित होते थे। प्राचीन भारत में नालन्दा जैसे प्रसिद्ध विश्वविद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा का आधार धर्म तथा अध्यात्म ही था।

(3) **समाज** : बालक की शिक्षा पर समाज का भी उल्लेखनीय प्रभाव पड़ता है। समाज शिक्षा का सक्रिय अनौपचारिक अभिकरण है। प्रत्येक समाज अपनी संस्कृति, प्रवृत्ति, आवश्यकता तथा समस्याओं के अनुसार विद्यालय तथा शिक्षा की व्यवस्था करता है। शिक्षा सामाजिक उद्देश्यों की परिपूर्ति का एक

साधन है। समाज इस प्रकार सम्पूर्ण शिक्षा–व्यवस्था को प्रभावित करता है। संकीर्ण रूप से देखें तो हम पाते हैं कि बालक का भी अपना स्वयं का समाज होता है। प्रारम्भिक अवस्था में परिवार, फिर आस–पड़ौस, उसके बाद उसके विद्यालया के साथी ही उसके लिए समाज का रूप ग्रहण कर लेते हैं। साथी–संगी भी बालक की शिक्षा को उल्लेखनीय रूप से प्रभावित करते हैं।

समाज सामान्यतया हमें निम्न तथ्यों से सम्बन्धित अनौपचारिक शिक्षा प्रदान करता है।

1. समाज की संस्कृति, परम्पराओं, रीति–रिवाजों तथा विशेषताओं से अवगत कराता है।
2. समाज के विभिन्न कार्य–कलापों से परिचित कराता है।
3. अनेक सामाजिक संस्थाओं तथा समाज के अंगो ; जैसे– परिवार, गोत्र, जाति–बिरादरी, राष्ट्र आदि के कार्य तथा दायित्यों से परिचित कराता है।
4. समाज की कुरीतियों, उनके निवारण के उपाय तथा समाज की विशेषताओं से अवगत कराता है।
5. समाज को आर्थिक, राजनैतिक आदि स्थितियों का ज्ञान कराता है।
6. मानव सम्बन्धों का ज्ञान कराता है।
7. सामाजिक पर्व तथा उत्सवों के इतिहास का ज्ञान देता है तथा उनसे सम्बन्धित तथ्यों, नीतियों तथा क्रियाओं का ज्ञान कराता है।

(4) **राज्य** : समाज तथा धर्म के समान ही राज्य भी शिक्षा का सक्रिय अनौपचारिक अभिकरण है। प्राचीन समय में राज्य शिक्षा की ओर अधिक ध्यान नहीं देते थे, किन्तु आज के युग में औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था करना राज्य का आवश्यक कार्य है। इस दायित्व के अन्तर्गत राज्य अपने क्षेत्र में शिक्षा का समुचित व्यवस्था करता है। औपचारिक शिक्षा के अलावा राज्य व्यक्तियों को अनौपचारिक शिक्षा भी प्रदान कराता है।

राज्य सामान्यतया निम्न क्षेत्रों से सम्बन्धित अनौपचारिक शिक्षा प्रदान करना है।

1. विभिन्न स्तरों के विद्यालयों तथा महाविद्यालयों की स्थापना करना।
2. शिक्षा पर होने वाले सम्पूर्ण व्यय के अधिकांश भाग को स्वयं वहन करना।
3. सम्पूर्ण–पद्धति पर सामान्य नियन्त्रण करना।
4. समाज की आवश्यकता के अनुसार शिक्षा तथा विद्यालय–व्यवस्था में संशोधन करना।
5. आवश्यक तथा अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करना।

6. शेक्षिक अनुसन्धान की व्यवस्था करना।
7. शिक्षा को स्थानीय तथा राष्ट्रीय संघर्षो व संकटों से बचाना।
8. माता–पिता का शिक्षा के प्रति उचित दृष्टिकोण निर्मित करना
9. परिवार तथा विद्यालय को एक–दूसरे के निकट लाना।
10. समुचित परीक्षा–प्रणाली तथा उसके उपकरणों का विकास करना।
11. राष्ट्रीय नीति तथा शिक्षा–व्यवस्था में समन्वय स्थापित करना।

अन्य अभिकरण

अनौपचारिक शिक्षा के कुछ अन्य अभिकरण भी है। इन अभिकरणों में हम सिनेमा, खेल, रेडियो, टेलीविजन, युवक दल, युवती दल, स्काउटिंग, प्रेस, सभा–मंच, समाज–शिक्षा–केन्द्र, पुस्तकालय तथा वाचनालय, सूचना–केन्द्र तथा अन्य उन संस्थाओं को ले सकते हैं जो किसी न किसी रूप में अनौपचारिक शिक्षा प्रदान करते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि विद्यालय शिक्षा प्रदान करते हैं तथा परिवार, समाज, धर्म, राज्य, खेल, सिनेमा आदि अनौपचारिक शिक्षा प्रदान करने के प्रमुख साधन है। शिक्षा के औपचारिक तथा अनौपचारिक अभिकरणों के अपने–अपने गुण एवं दोष हैं। दोनों ही प्रकार के अभिकरणों के दोषों का निराकरण करने तथा सर्वाधिक लाभ प्राप्त करने की दृष्टि से यह आवश्यक है कि इन दोनों ही प्रकार के अभिकरणों का समन्वय किया जाय। शिक्षा के औपचारिक तथा अनौपचारिक अभिकरणों के मध्य समन्वय स्थापित करने हेतु निम्न प्रयास किये जा सकते हैं।

1. समय–समय पर शिक्षा सम्मेलनों का आयोजन किया जाये।
2. अभिभावक–दिवसों का आयोजन समय–समय पर किया जाये।
3. विद्यालय तथा समजा एक–दूसरे को विभिन्न उपायों से समझें।
4. विद्यालयों को लघु समाज को रूप दिया जाये।
5. शिक्षा के सामाजिक पक्ष को सुदृढ़ बनाया जाये।

2. आवश्यकता व कठिनाइयाँ

अनौपचारिक शिक्षा का महत्व

विश्व में बढ़ती हुई जनसंख्या, बढ़ते हुए शिक्षा–व्यय तथा औपचारिक शिक्षा की असफलता ने विश्व के शिक्षा–शास्त्रियों को यह सोचने को विवश कर दिया कि वर्तमान औपचारिक शिक्षा के स्थान पर शिक्षा की कोई अन्य व्यवस्था तलाश की जाय। इसी चिन्तन में उनका ध्यान अनौपचारिक शिक्षा की ओर गया। अनौपचारिक शिक्षा ने आज यह सिद्ध कर दिया है कि वह व्यक्ति के जीवन के लिए औपचारिक शिक्षा से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। अनौपचारिक शिक्षा हमें इतनें अनुभव प्रदान करती है कि वह मनुष्य के जीवन को ही एक शैली तथा दर्शन प्रदान कर देती है।

औपचारिक शिक्षा केवल कुछ प्रदान करती है, जबकि अनौपचारिक शिक्षा हमें जीवन के हर क्षेत्र से सम्बन्धित हर प्रकार का ज्ञान प्रदान करती है। अनौपचारिक शिक्षा हमें वह ज्ञान तथा अनुभव प्रदान करती है जो हमारे जीवन में वास्तविक रूप से काम आता है। इसके अलावा औपचारिक शिक्षा हम जीवन के कुछ वर्षो तक (सामान्यतया विद्यार्थी जीवन तक ही) प्राप्त करते हैं, जबकि अनौपचारिक शिक्षा जीवन भर चलती है।

अनौचारिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए आर्थिक साधनों की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इस कारण इसमें शिक्षा–व्यय कम होता है।

पत्राचार शिक्षा

दूरस्थ शिक्षा की जड़ें पत्राचार द्वारा शिक्षा में हैं। पत्राचार शिक्षा अनेक वर्ष पहले प्रारम्भ हुई थी। पत्राचार शिक्षा में उस प्रकार के ही पाठ्यक्रम को अपनाया जाता था जैसा कि औपचारिक शिक्षा में। किन्तु अब सीखने के सिद्धान्तों एवं प्रक्रिया के सम्बन्ध में अनुसन्धानों ने तथा इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों के विकास ने पत्राचार शिक्षा की प्रकृति में परिवर्तन कर दिया है। पत्राचार शिक्षा के स्थान पर दूरस्थ शिक्षा पर बल दिया जाने लगा है किन्तु पत्राचार शिक्षा विभाग अब भी अनेकों विश्वविद्यालायों में सक्रिय है।

भारतवर्ष में पत्राचार पाठ्यक्रम सन् 1692 से प्रारम्भ किये गये। विश्वविद्यालयों में पत्राचार विभाग या निदेशालय खोले गये। इस समय इनकी संख्या 41 के लगभग है। इनमें अधिकतर स्नातक तक ही परीक्षा के लिए विद्यार्थियों को तैयार करते है।

वर्तमान समय में दूरस्थ शिक्षा दो रूप में दी जा रही है– (1) पत्राचार कोर्स द्वारा जो परम्परागत विश्वविद्यालयों द्वारा संगठित किये जा रहे हैं तथा (2) दूरस्थ शिक्षा कोर्स जो खुले विश्वविद्यालययों

द्वारा संचालित हो रहे हैं। राष्ट्रीय स्तर पर एक और राज्य सरकार के स्तर पर चार खुले विश्वविद्यालय स्थापित किये जा चुके हैं।

औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता

माना कि विद्यालय अपने उच्च एवं आदर्शात्मक कार्यो से आज पर्याप्त मात्रा में विमुख हो गये हैं, किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि हम विद्यालय व्यवस्था को ही समाप्त कर दें। आज भी विद्यालय प्रत्येक समाज के लिए अपरिहार्य हैं।

आज के जटिल तथा संघर्षमय समाज में विद्यालय एक रीढ़ के समान है। जिस प्रकार कोई शरीर बिना रीढ़ के खड़ा नहीं हो सकता ठीक वैसे ही आज का समाज बिना औपचारिक शिक्षा–व्यवस्था के अपना विकास नहीं कर सकता है। समाज और व्यक्ति को विद्यालय की आवश्यकता निम्न कारणों से होती है।

1. **संस्कृति के सरंक्षण हेतु–** प्रत्येक समाज की अपनी संस्कृति होती है। संस्कृति के आधार पर ही किसी समाज का अस्तित्व होता है। विद्यालय समाज की संस्कृति का संरक्षण करते हैं। इस कार्य हेतु वे संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करते हैं, संस्कृति का परिमार्जन करते हैं, तथा संस्कृति में समाविष्ट अनावश्यक तथ्यों की छँटनी कर संस्कृति को उपयोगी बनाते हैं।
2. **मानव विकास के लिए–** विद्यालय मानव का विकास करते है। वे व्यक्ति का जीवन तथा जीविका दोनों का ही निर्माण करते हैं। विद्यालय मनुष्य को जीने की राह दिखाते हैं। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य अपनी आध्यात्मिक तथा भौतिक प्रगति कर पाया है।
3. **व्यक्तित्व का विकास–** बालक के व्यक्तित्व का संतुलित तथा चहुँमुखी विकास करने के लिए विद्यालयों की आवश्यकता होती है। विद्यालय इस कार्य के लिए सुनियोजित, पूर्व–निश्चित कार्यक्रमानुसार अपनी योजनाओं को क्रियान्तिव करते हैं।
4. **सुनागरिकों को निर्माण–** प्रजातन्त्र की सफलता उसके सुनागरिकों पर निर्भर करती है ; और विद्यालय ही वह स्थान है, जहाँ सुनागरिकता का सुनियोजित, सुव्यवस्थित तथा व्यावहारिक पाठ छात्रों को पढ़ाया जाता है। छात्र विद्यालय में ही अधिकार, कर्त्तव्य, सहयोग, सहानुभूति तथा सहिष्णुता जैसे गुणो का विकास करते हैं।
5. **समाजिक विकास–** समाज के बहुमूखी विकास के लिए विद्यालयों की नितान्त आवश्यकता होती है। विद्यालय समाज को विकासोन्मुख बनाते हैं तथा उसे निरन्तरता प्रदान करते हैं। विद्यालय समाज के

आर्थिक, राजनैतिक तथा सामाजिक विकास के लिए सुयोग्य नागरिक तैयार करते हैं। शिक्षित व्यक्ति समाज की सम्पत्ति तथा आधार–स्तम्भ होते हैं।

6. **शिक्षित तथा सन्तुलित नागरिकों को निर्माण–** समाज के लिए शिक्षित तथा सन्तुलित व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों को होना अत्यन्त आवश्यक है। इन्हीं व्यक्तियों पर समाज का उत्थान निर्भर करता है। विद्यालय ही वे अभिकरण हैं जहाँ व्यक्तियों को औपचारिक रूप से शिक्षित किया जाता है तथा औपचारिक रूप से उनके व्यक्तित्व का समुचित विकास किया जाता है।

7. **अनौपचारिक अभिकरणों की कमी को दूर करना–** शिक्षा के अनौपचारिक अभिकरण बालक को किसी न किसी प्रकार की शिक्षा प्रदान करते हैं, किन्तु वे शिक्षा प्रदान करने में पटु नहीं होते है। अतः उनके द्वारा प्रदत्त शिक्षा में कुछ कमियाँ रह जाती हैं। उनके द्वारा बालक के विकास में कुछ दोष रह जाते हैं। इन कमियों तथा दोषों को दूर करने हेतु विद्यालयों की आवश्यकता पड़ती है।

औपचारिक शिक्षा के समक्ष चुनोतियाँ

विद्यालय समुन्नयन योजनाओं के असफल होने के कारण अधोलिखित हो सकते हैं–

1. वार्षिक योजना के अनुसार अध्यापक कार्य का समुन्नयन नहीं होना।
2. योजना कार्यो में भौतिक साधनों का अभाव जो एक निश्चित सीमा में आवश्यक है।
3. वार्षिक योजना का समय–समय पर मूल्यांकन नहीं होना।
4. जिला शिक्षा अधिकारी का विद्यालय योजना के आधार पर जिला योजना बनाते समय निम्न तथ्यों पर ध्यान नहीं देता। कौन–कौन सी विकास योजनाएँ स्कूलों में चल रही हैं। विभिन्न स्कूलों में चल रही समान योजनाओं में समन्वय। तत्सम्बन्धी आवश्यक मार्गदर्शन एवं आवश्यक संसाधनों की उपलब्धि।
5. शिक्षकों को शाला उन्नयन की दृष्टि से क्या–क्या अन्तः सेवा कार्यक्रमों की आवश्यकता है? और वह किन विस्तार सेवाओं का साथ ले सकता है? का ध्यान न रखना।
6. उक्त विकास योजनाओं पर लगभग इस वर्ष और आगामी वर्षो में क्या व्यय बैठेगा, समुचित आवश्यक वित्तीय सहायता न मिलना।

विद्यालय योजना के सिद्धान्त –

1. **आवश्यकताओं के निर्माण का सिद्धान्त** – हर विद्यालय का अपना अद्वितीय व्यक्तित्व (पर्सनलिटी) होता है। अतः हर विद्यालय की योजना अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप भिन्न–भिन्न होगी।

2. **विश्वसनीय तथ्यों पर योजना निर्माण का सिद्धान्त–** योजना निर्माण के लिए सही तथा विश्वसनीय तथ्यों के के आधार पर लक्ष्य व उद्देश्य सुनिश्चित किए जाने चाहिए।

3. **जनतान्त्रिक मूल्यों द्वारा योजना पूर्ति का सिद्धान्त–** विद्यालय योजना की सफलता में जनतान्त्रिक मूल्यों यथा सहयोग, सहभार, परस्पर समझ आवश्यक हैं, अतः इसके लिए आवश्यक वातावरण भी आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति की क्षमता सहयोग, योजना पूर्ति के लिए आवश्यक है।

4. **प्रभावी नेतृत्व का सिद्धान्त–** विद्यालय योजना की क्रियान्विति या सफलता के लिए उचित व योग्य नेतृत्व की आवश्यकता है। जहाँ विद्यालय में नेतृत्व की कमी हो, जिला शिक्षा अधिकारी आवश्यक सहयोग व मार्गदर्शन प्रदान करें। आवश्यकता हो तो पूर्व प्रशिक्षण दिया जाये।

5. **समयावधि का निर्धारण–** योजना की अवधि निर्धारण आवश्यक है।

6. **भावी कठिनाइयाँ–** भावी कठिनाइयों पर तथा समाधान के विकल्पों पर पूर्व में विचार–विमर्श कर उनकों दूर करने के विकल्पों पर भी विचार होना चाहिए।

7. **लचीलेपन का सिद्धान्त–** अनुभव के आधार पर योजनाओं में आवश्यक संशोधन हो सकते हैं।

8. क्रियान्विति के चरणों का निरन्तर मूल्यांकन होना चाहिए।

VPM CLASSES